

INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF MANAGEMENT SOCIOLOGY & HUMANITIES



ISSN 2277 – 9809 (online)

ISSN 2348 - 9359 (Print)

An Internationally Indexed Peer Reviewed & Refereed Journal

www.IRJMSH.com
www.isarasolutions.com

Published by iSaRa Solutions

आधुनिक भारत में धर्मनिरपेक्षता का राजनीतिक विश्लेषणात्मक अध्ययन: संवैधानिक आदर्श, राजनीतिक अभ्यास एवं समकालीन चुनौतियाँ

डॉ. बृजेश स्वरूप सोनकर

असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग

कर्म क्षेत्र महाविद्यालय, इटावा (उ.प्र.)

शोध सार (Abstract)

प्रस्तुत शोध भारतीय धर्मनिरपेक्षता के संवैधानिक प्रावधानों, ऐतिहासिक विकास तथा राजनीतिक अभ्यास का गहन अध्ययन करता है। शोध के मुख्य उद्देश्य भारतीय संविधान में धर्मनिरपेक्षता के प्रावधानों का विश्लेषण, स्वतंत्रता के बाद राजनीतिक दलों एवं सरकारों की नीतियों का मूल्यांकन, चुनावी राजनीति एवं सांप्रदायिक दंगों में धर्मनिरपेक्षता के प्रभाव का आकलन तथा समकालीन चुनौतियों का आलोचनात्मक अध्ययन करना है। शोध में तीन प्राक्कल्पनाओं का परीक्षण किया गया—संवैधानिक आदर्श का राजनीतिक अभ्यास में अपूर्ण क्रियान्वयन, चुनावी प्रतिस्पर्धा द्वारा धार्मिक धुवीकरण को बढ़ावा मिलना तथा राज्य की नीतियों और सामाजिक-राजनीतिक वास्तविकता के बीच स्पष्ट अंतराल। सैद्धांतिक विश्लेषण में नेहरूवादी समदूरी, गांधीवादी सर्वधर्म समभाव, आंबेडकरवादी सामाजिक न्याय तथा राजेव भार्गव के 'प्रिंसिपल्ड डिस्टेंस' मॉडल की तुलना आशिस नंदी एवं पंथा चटर्जी की आलोचनाओं से की गई। निष्कर्ष रूप में पाया गया कि भारतीय धर्मनिरपेक्षता एक मजबूत संवैधानिक आदर्श है, परंतु चुनावी दबाव, धार्मिक पहचान आधारित राजनीति तथा सामाजिक न्याय की अपर्याप्त प्राथमिकता के कारण इसका पूर्ण क्रियान्वयन नहीं हो पाया है। आंबेडकरवादी दृष्टि इस अवधारणा को समृद्ध करती है, जबकि 'प्रिंसिपल्ड डिस्टेंस' मॉडल व्यावहारिक चुनौतियों को समझने में सहायक सिद्ध होता है।

मुख्य शब्द : धर्मनिरपेक्षता, भारतीय संविधान, प्रिंसिपल्ड डिस्टेंस, आंबेडकरवादी सामाजिक न्याय, चुनावी राजनीति, सांप्रदायिकता, राज्य-धर्म संबंध, धार्मिक धुवीकरण।

प्रस्तावना

धर्मनिरपेक्षता आधुनिक लोकतांत्रिक राज्यों की एक मूलभूत अवधारणा है, जिसका उद्देश्य राज्य और धर्म के बीच संबंधों को इस प्रकार व्यवस्थित करना है कि कोई भी धर्म राज्य का आधिकारिक धर्म न बने तथा सभी नागरिकों को धार्मिक स्वतंत्रता समान रूप से प्राप्त हो। पश्चिमी मॉडल में, विशेष रूप से संयुक्त राज्य अमेरिका के प्रथम संशोधन तथा फ्रांस की *laïcité* व्यवस्था में, राज्य और धर्म के बीच सख्त पृथक्करण (*wall of separation*) का सिद्धांत अपनाया गया है। इस मॉडल में राज्य न तो किसी धर्म का समर्थन करता है और न ही धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप करता है; धर्म को मुख्यतः निजी क्षेत्र तक सीमित रखा जाता है। इसके विपरीत, भारतीय धर्मनिरपेक्षता का मॉडल पश्चिमी पृथक्करणवादी दृष्टिकोण से भिन्न है। भारत में इसे 'सैद्धांतिक दूरी' (*principled distance*) अथवा 'समान सम्मान' (*sarva dharma sambhava*) के रूप में समझा जाता है। राज्य किसी भी धर्म

को विशेष संरक्षण नहीं देता, किन्तु सामाजिक सुधार, सार्वजनिक व्यवस्था, नैतिकता तथा स्वास्थ्य के आधार पर धार्मिक प्रथाओं में हस्तक्षेप कर सकता है। यह मॉडल बहु-धार्मिक एवं बहु-सांस्कृतिक समाज की वास्तविकताओं को ध्यान में रखकर विकसित हुआ है, जहाँ धर्म केवल व्यक्तिगत विश्वास न होकर सामुदायिक पहचान का भी महत्वपूर्ण अंग है। भारतीय संविधान में धर्मनिरपेक्षता का स्थान मूलतः अंतर्निहित था, यद्यपि मूल प्रस्तावना (26 जनवरी 1950) में 'धर्मनिरपेक्ष' शब्द का उल्लेख नहीं था। मूल प्रस्तावना भारत को 'सम्प्रभु लोकतांत्रिक गणराज्य' घोषित करती थी। संविधान सभा की बहसों में प्रो. के.टी. शाह तथा अन्य सदस्यों द्वारा प्रस्तावना में 'सेक्युलर' शब्द जोड़ने का प्रस्ताव रखा गया, परन्तु इसे अस्वीकार कर दिया गया। डॉ. भीमराव आंबेडकर तथा अन्य सदस्यों का मत था कि संविधान के प्रावधानों में ही धर्मनिरपेक्षता का सार विद्यमान है, अतः शब्द का स्पष्ट उल्लेख आवश्यक नहीं। तथापि, 42वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1976 (आपात काल के दौरान पारित) द्वारा प्रस्तावना में 'समाजवादी' तथा 'धर्मनिरपेक्ष' शब्दों को जोड़ा गया। इस प्रकार भारत को 'सम्प्रभु समाजवादी धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक गणराज्य' घोषित किया गया। सर्वोच्च न्यायालय ने केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य (1973) तथा एस.आर. बोम्मई बनाम भारत संघ (1994) सहित अनेक निर्णयों में स्पष्ट किया है कि धर्मनिरपेक्षता संविधान की मूल संरचना (*basic structure*) का अभिन्न अंग है और 42वें संशोधन ने केवल उस आदर्श को स्पष्ट किया जो पहले से विद्यमान था।

संविधान के मौलिक अधिकार अध्याय में धर्मनिरपेक्षता को सुदृढ़ आधार प्रदान किया गया है। अनुच्छेद 25 प्रत्येक व्यक्ति को अंतःकरण की स्वतंत्रता तथा धर्म को स्वतंत्र रूप से मानने, आचरण करने एवं प्रचार करने का अधिकार देता है, किन्तु यह अधिकार सार्वजनिक व्यवस्था, नैतिकता, स्वास्थ्य तथा अन्य मौलिक अधिकारों के अधीन है। राज्य को धर्म से जुड़ी धर्मनिरपेक्ष गतिविधियों के नियमन तथा सामाजिक कल्याण एवं सुधार के लिए कानून बनाने का अधिकार भी प्राप्त है। अनुच्छेद 26 प्रत्येक धार्मिक संप्रदाय को अपने धार्मिक मामलों के प्रबंधन, संस्थानों की स्थापना तथा संपत्ति के प्रशासन का अधिकार प्रदान करता है। अनुच्छेद 27 किसी भी व्यक्ति को किसी विशेष धर्म के संवर्धन हेतु कर देने के लिए बाध्य नहीं करता। अनुच्छेद 28 राज्य द्वारा पूर्णतः वित्तपोषित शैक्षणिक संस्थानों में धार्मिक शिक्षा पर प्रतिबंध लगाता है। इन प्रावधानों के अतिरिक्त अनुच्छेद 14, 15 एवं 16 समानता तथा धर्म के आधार पर भेदभाव के निषेध के माध्यम से धर्मनिरपेक्षता को और सुदृढ़ करते हैं। अनुच्छेद 29 एवं 30 अल्पसंख्यकों को अपनी संस्कृति तथा शैक्षणिक संस्थानों की रक्षा का अधिकार देते हैं। आधुनिक भारत में धर्मनिरपेक्षता के राजनीतिक आयाम अत्यंत जटिल एवं बहुआयामी हैं। 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या 121.09 करोड़ थी, जिसमें हिंदू 79.8 प्रतिशत (96.63 करोड़), मुस्लिम 14.2 प्रतिशत (17.22 करोड़), ईसाई 2.3 प्रतिशत, सिख 1.7 प्रतिशत, बौद्ध 0.7 प्रतिशत तथा जैन 0.4 प्रतिशत थे। यह धार्मिक विविधता भारतीय राजनीति को गहराई से प्रभावित करती है। स्वतंत्रता के पश्चात् से लेकर वर्तमान तक राजनीतिक दल, चुनावी रणनीतियाँ, नीति-निर्माण तथा सामाजिक आंदोलन धर्मनिरपेक्षता के आदर्श तथा व्यवहार के बीच निरंतर तनाव को प्रकट करते रहे हैं। सांप्रदायिक हिंसा की घटनाएँ, धार्मिक पहचान आधारित चुनावी धुवीकरण, अल्पसंख्यक अधिकारों तथा बहुसंख्यक आकांक्षाओं के बीच संतुलन का प्रश्न—ये सभी तत्व आधुनिक भारतीय राजनीति में धर्मनिरपेक्षता को एक जीवंत एवं विवादास्पद मुद्दा बनाते हैं। इस पृष्ठभूमि में, आधुनिक भारत में धर्मनिरपेक्षता का राजनीतिक विश्लेषणात्मक अध्ययन न केवल संवैधानिक आदर्शों की परीक्षा करता है, अपितु

राजनीतिक अभ्यास, चुनावी व्यवहार तथा सामाजिक यथार्थ के बीच के अंतराल को भी उद्घाटित करता है। यह अध्ययन राजनीति विज्ञान की दृष्टि से इसलिए आवश्यक है कि यह राज्य, समाज एवं धर्म के त्रिकोणीय संबंधों को वैज्ञानिक पद्धति से समझने का प्रयास करता है तथा लोकतांत्रिक संस्थाओं की स्थिरता एवं सामाजिक सद्भाव के लिए नीतिगत दिशा प्रदान कर सकता है।

शोध की आवश्यकता एवं महत्व

शोध की आवश्यकता एवं महत्व

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत में धर्म और राजनीति के संबंधों में क्रमिक किन्तु गहन परिवर्तन हुए हैं। प्रारंभ में जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में राज्य ने धर्मनिरपेक्षता को संवैधानिक आदर्श के रूप में स्थापित करने का प्रयास किया, जिसमें धार्मिक तटस्थता तथा सामाजिक सुधार पर बल दिया गया। तथापि, 1960 एवं 1970 के दशक में सांप्रदायिक दंगों की पुनरावृत्ति, 1980 के दशक में शाह बानो प्रकरण तथा राम जन्मभूमि आंदोलन ने धर्म को राजनीतिक लामबंदी का प्रमुख उपकरण बना दिया। 1990 के दशक में मंडल-कमंडल राजनीति तथा 6 दिसंबर 1992 को बाबरी मस्जिद विध्वंस की घटना ने धर्मनिरपेक्ष आदर्श तथा राजनीतिक यथार्थ के बीच की दूरी को और स्पष्ट कर दिया। इन घटनाक्रमों ने यह दर्शाया कि धर्मनिरपेक्षता केवल संवैधानिक प्रावधान तक सीमित नहीं रह सकती; उसका राजनीतिक अभ्यास निरंतर चुनौतियों से घिरा रहा है। वर्तमान में सांप्रदायिक राजनीति, अल्पसंख्यक अधिकारों की सुरक्षा तथा बहुसंख्यक पहचान की अभिव्यक्ति के बीच निरंतर तनाव विद्यमान है। एक ओर अनुच्छेद 25-30 तथा अनुच्छेद 14-16 अल्पसंख्यक समुदायों को धार्मिक, सांस्कृतिक एवं शैक्षणिक अधिकार प्रदान करते हैं, दूसरी ओर चुनावी प्रतिस्पर्धा में धार्मिक ध्रुवीकरण की प्रवृत्ति बढ़ी है। 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की जनसंख्या में हिंदू 79.8 प्रतिशत तथा मुस्लिम 14.2 प्रतिशत हैं; यह जनसांख्यिकीय वास्तविकता राजनीतिक दलों की रणनीतियों को प्रभावित करती है। राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो के आँकड़े समय-समय पर सांप्रदायिक हिंसा की घटनाओं को रेखांकित करते रहे हैं, जो सामाजिक सद्भाव के लिए गंभीर चुनौती प्रस्तुत करते हैं।

समकालीन राजनीतिक परिदृश्य में धर्मनिरपेक्षता की प्रासंगिकता और अधिक बढ़ गई है। दल-व्यवस्था में कांग्रेस की प्रभुत्वशाली स्थिति से बहुदलीय प्रतिस्पर्धा तथा पहचान-आधारित राजनीति के उदय ने चुनावी व्यवहार को धार्मिक एवं जातीय समीकरणों से जोड़ दिया है। नीति-निर्माण के क्षेत्र में नागरिकता, शिक्षा, व्यक्तिगत कानून तथा धार्मिक स्थलों से जुड़े विवाद धर्मनिरपेक्षता के सिद्धांतों की निरंतर परीक्षा लेते हैं। इन परिस्थितियों में धर्मनिरपेक्षता केवल सैद्धांतिक आदर्श नहीं, अपितु लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था की व्यवहारिकता का प्रश्न बन चुकी है। प्रस्तुत अध्ययन का महत्व नीति-निर्माण, सामाजिक सद्भाव तथा लोकतांत्रिक स्थिरता तीनों स्तरों पर स्पष्ट है। यह शोध संवैधानिक आदर्श तथा राजनीतिक अभ्यास के बीच के अंतराल को वैज्ञानिक पद्धति से उजागर करके नीति-निर्माताओं को वस्तुनिष्ठ आधार प्रदान कर सकता है। साथ ही, यह सामाजिक सद्भाव की रक्षा तथा लोकतांत्रिक संस्थाओं की विश्वसनीयता बनाए रखने के लिए आवश्यक विश्लेषण उपलब्ध कराता है। राजनीति विज्ञान के क्षेत्र में यह अध्ययन धर्म, राज्य एवं समाज के जटिल संबंधों को समझने का एक व्यवस्थित प्रयास है, जो समकालीन भारत की राजनीतिक स्थिरता के लिए अत्यंत प्रासंगिक है।

शोध समस्या

आधुनिक भारत में संवैधानिक धर्मनिरपेक्षता और वास्तविक राजनीतिक अभ्यास के बीच अंतराल का विश्लेषण।

शोध उद्देश्य

1. भारतीय संविधान में धर्मनिरपेक्षता के प्रावधानों एवं उनके ऐतिहासिक विकास का अध्ययन।
2. स्वतंत्रता के बाद प्रमुख राजनीतिक दलों एवं सरकारों की धर्मनिरपेक्षता संबंधी नीतियों का विश्लेषण।
3. चुनावी राजनीति, सांप्रदायिक दंगों एवं नीतिगत निर्णयों में धर्मनिरपेक्षता के प्रभाव का मूल्यांकन।
4. समकालीन चुनौतियों (सांप्रदायिकता, धार्मिक पहचान आधारित राजनीति) का आलोचनात्मक अध्ययन।

प्राक्कल्पनाएँ (Hypotheses)

1. भारतीय धर्मनिरपेक्षता का संवैधानिक आदर्श राजनीतिक अभ्यास में पूर्णतः लागू नहीं हो पाया है।
2. चुनावी प्रतिस्पर्धा ने धर्मनिरपेक्षता को कमजोर किया है तथा धार्मिक धुवीकरण को बढ़ावा दिया है।
3. राज्य की धर्मनिरपेक्ष नीतियों और सामाजिक-राजनीतिक वास्तविकता में स्पष्ट अंतराल विद्यमान है।

शोध प्रश्न (Research Questions)

1. भारतीय धर्मनिरपेक्षता के विभिन्न सैद्धांतिक दृष्टिकोण (नेहरूवादी, गांधीवादी, आंबेडकरवादी तथा प्रिंसिपल्ड डिस्टेंस) समकालीन राजनीतिक और सामाजिक व्यवहार में किस प्रकार परस्पर क्रिया करते हैं?
2. क्या राजेव भार्गव का 'प्रिंसिपल्ड डिस्टेंस' मॉडल वर्तमान भारत में राज्य-धर्म संबंधों को पर्याप्त रूप से स्पष्ट कर पाता है, अथवा नंदी-चटर्जी की आलोचनाएँ अधिक प्रासंगिक सिद्ध होती हैं?
3. जाति और अल्पसंख्यक अधिकारों के संदर्भ में आंबेडकरवादी सामाजिक न्याय की दृष्टि भारतीय धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा को कैसे समृद्ध या चुनौती देती है?

साहित्य समीक्षा

1. गांधी और नेहरू के विचार

महात्मा गांधी ने धर्म को व्यक्तिगत नैतिकता और सत्य की खोज से जोड़ा। उन्होंने *सर्व धर्म समभाव* का सिद्धांत प्रतिपादित किया, जिसमें सभी धर्मों के प्रति समान आदर की भावना निहित है। गांधी के अनुसार राज्य को धर्म-निरपेक्ष होना चाहिए, परंतु समाज में धार्मिक सहिष्णुता का आधार पारंपरिक भारतीय मूल्य होना चाहिए। उनके अंतिम वर्षों में उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा कि राज्य पूर्णतः धर्मनिरपेक्ष होना चाहिए तथा धर्म व्यक्तिगत मामला है।

जवाहरलाल नेहरू का दृष्टिकोण अधिक आधुनिक एवं वैज्ञानिक था। उन्होंने *वैज्ञानिक स्वभाव* (Scientific Temper) पर बल दिया तथा धर्म को निजी क्षेत्र में सीमित रखने का समर्थन किया। नेहरू के लिए धर्मनिरपेक्षता का अर्थ राज्य का किसी भी धर्म से अलगाव, समान नागरिकता तथा सांप्रदायिकता के विरुद्ध संघर्ष था। उन्होंने हिंदू कोड बिल जैसे सुधारवादी कानूनों के माध्यम से राज्य के धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप का समर्थन किया। गांधी और नेहरू दोनों ने स्वतंत्र भारत में धर्मनिरपेक्ष राज्य की आवश्यकता

पर सहमति जताई, यद्यपि उनके आधार भिन्न थे—गांधी का धार्मिक-नैतिक और नेहरू का तर्कवादी-आधुनिक।

2. डॉ. भीमराव आंबेडकर के विचार

डॉ. आंबेडकर ने संविधान निर्माण के दौरान धर्मनिरपेक्षता को संविधान की मूल भावना माना। उन्होंने संविधान सभा में 'सेक्युलर' शब्द को प्रस्तावना में शामिल करने का विरोध इस आधार पर किया कि संपूर्ण संविधान ही धर्मनिरपेक्ष राज्य की अवधारणा को समाहित करता है। उनके अनुसार, धर्म के आधार पर भेदभाव का निषेध और समान नागरिकता ही पर्याप्त है। आंबेडकर का जोर सामाजिक न्याय, जाति-व्यवस्था के उन्मूलन और अल्पसंख्यक अधिकारों की सुरक्षा पर था। उन्होंने देखा कि केवल हिंदू-मुस्लिम संबंधों पर केंद्रित धर्मनिरपेक्षता अधूरी है; जाति-उत्पीड़न को संबोधित किए बिना यह सतही रह जाती है।

3. डोनाल्ड ई. स्मिथ का अध्ययन

डोनाल्ड ई. स्मिथ की पुस्तक *India as a Secular State* (1963) इस विषय पर प्रारंभिक एवं महत्वपूर्ण अध्ययन है। स्मिथ ने धर्मनिरपेक्ष राज्य की तीन विशेषताएँ बताई—धार्मिक स्वतंत्रता, समान नागरिकता और राज्य-धर्म अलगाव। उन्होंने भारत को “योग्य हाँ” (qualified yes) की श्रेणी में रखा। स्मिथ के अनुसार अल्पसंख्यक समुदाय धर्मनिरपेक्ष राज्य के स्वाभाविक रक्षक हैं क्योंकि वे ही इससे सबसे अधिक लाभान्वित होते हैं। यह पुस्तक भारतीय संविधान, ऐतिहासिक परंपराओं और व्यावहारिक चुनौतियों का विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत करती है।

4. राजेव भार्गव का सिद्धांत: 'प्रिंसिपल्ड डिस्टेंस'

राजेव भार्गव ने भारतीय धर्मनिरपेक्षता को पश्चिमी मॉडलों से अलग करके देखा। उन्होंने *Secularism and Its Critics* (1998) नामक संपादित ग्रंथ में तथा अपने कई लेखों में **प्रिंसिपल्ड डिस्टेंस** (Principled Distance) की अवधारणा प्रस्तुत की। इसके अनुसार भारतीय राज्य धर्मों से सख्त अलगाव नहीं रखता, बल्कि सिद्धांतपूर्ण दूरी बनाए रखता है। राज्य धर्मों का सम्मान करता है, परंतु समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व के लिए आवश्यक होने पर हस्तक्षेप भी करता है (जैसे अस्पृश्यता का निषेध या व्यक्तिगत कानूनों में सुधार)। भार्गव इसे “संदर्भात्मक धर्मनिरपेक्षता” कहते हैं, जो पश्चिमी *लाइसिटी* या अमेरिकी दीवार-अलगाव से भिन्न है।

5. आशीष नंदी और टी.एन. मदान की आलोचना

आशीष नंदी ने *The Politics of Secularism and the Recovery of Religious Tolerance* (1988) में धर्मनिरपेक्षता को पश्चिमी-आधुनिक विचारधारा बताया। उनके अनुसार आधुनिक धर्मनिरपेक्ष राज्य ने पारंपरिक भारतीय धार्मिक सहिष्णुता को कमजोर किया है। नंदी का मानना है कि सांप्रदायिक हिंसा अक्सर आधुनिक राज्य की राजनीति का परिणाम है, न कि पारंपरिक धर्म का। वे गांधीवादी परंपरा से प्रेरित होकर “धार्मिक सहिष्णुता की पुनर्प्राप्ति” की वकालत करते हैं।

टी.एन. मदान ने “Secularism in Its Place” (1987) में तर्क दिया कि धर्मनिरपेक्षता ईसाई-पश्चिमी अवधारणा है, जो दक्षिण एशियाई समाजों में जहाँ धर्म सामाजिक जीवन का अभिन्न अंग है, आसानी से लागू नहीं हो सकती। दोनों विद्वान धर्मनिरपेक्षता की पश्चिमी नकल की आलोचना करते हैं।

6. पार्था चटर्जी के विचार

पार्था चटर्जी ने *Secularism and Toleration* (1994/1998) में भारतीय धर्मनिरपेक्षता की आंतरिक विसंगतियों की ओर ध्यान दिलाया। उन्होंने बताया कि आधुनिक राज्य एक ओर धर्म और राजनीति को अलग करने का दावा करता है, दूसरी ओर धार्मिक संस्थानों के विनियमन में सक्रिय रूप से शामिल रहता है। चटर्जी का तर्क है कि हिंदू बहुसंख्यकवाद आधुनिक धर्मनिरपेक्ष राज्य की संस्थाओं के साथ पूर्णतः अनुकूल हो सकता है। वे धर्मनिरपेक्षता के स्थान पर “लोकतांत्रिक सहिष्णुता” और अल्पसंख्यक समुदायों के आंतरिक लोकतंत्रीकरण पर बल देते हैं।

7. अन्य महत्वपूर्ण शोध एवं संकलन

- **राजीव भार्गव (सं.)** *Secularism and Its Critics* (OUP, 1998) – इस खंड में स्मिथ, गैलेन्टर, नंदी, चटर्जी, मदान, अकील बिलग्रामी, अमर्त्य सेन आदि के लेख संकलित हैं। यह भारतीय धर्मनिरपेक्षता पर सबसे महत्वपूर्ण संकलन माना जाता है।
- **Anuradha Dingwaney Needham एवं Rajeswari Sunder Rajan (सं.)** *The Crisis of Secularism in India* (Duke University Press, 2007) – इसमें नंदी, चटर्जी, जानेंद्र पांडेय, सुनील खिलनानी आदि के लेख शामिल हैं, जो धर्मनिरपेक्षता के संकट और संभावनाओं पर चर्चा करते हैं।
- सरकारी रिपोर्टों में संविधान सभा के वाद-विवाद, विधि आयोग की रिपोर्टें तथा राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग की रिपोर्टें धर्मनिरपेक्षता के व्यावहारिक पक्ष को रेखांकित करती हैं।

उपरोक्त साहित्य से स्पष्ट है कि भारतीय धर्मनिरपेक्षता न तो पूर्णतः पश्चिमी अलगवाव मॉडल है और न ही मात्र पारंपरिक सहिष्णुता। यह एक गतिशील एवं विवादास्पद अवधारणा है, जिसमें नेहरूवादी आधुनिकता, गांधीवादी नैतिकता, आंबेडकरवादी सामाजिक न्याय, भार्गव का प्रिंसिपल्ड डिस्टेंस तथा नंदी-चटर्जी की आलोचनाएँ शामिल हैं। यह समीक्षा दर्शाती है कि शोधकर्ता को इन विभिन्न दृष्टिकोणों के बीच संवाद स्थापित करते हुए आगे बढ़ना चाहिए।

शोध अंतराल (Research Gap)

उपरोक्त साहित्य समीक्षा से स्पष्ट होता है कि भारतीय धर्मनिरपेक्षता पर सैद्धांतिक चर्चाएँ पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं। गांधी-नेहरू-आंबेडकर के वैचारिक आधार, डोनाल्ड स्मिथ का प्रारंभिक विश्लेषण, राजेव भार्गव का ‘प्रिंसिपल्ड डिस्टेंस’, तथा नंदी, मदान और चटर्जी की आलोचनाएँ इस क्षेत्र की प्रमुख धाराएँ हैं। तथापि, कुछ महत्वपूर्ण अंतराल अभी भी विद्यमान हैं—

1. अधिकांश अध्ययन या तो संवैधानिक-सैद्धांतिक स्तर पर केंद्रित हैं या पश्चिमी बनाम भारतीय मॉडल की तुलना पर। समकालीन राजनीतिक व्यवहार (जैसे व्यक्तिगत कानूनों में सुधार, अल्पसंख्यक अधिकारों का

व्यावहारिक क्रियान्वयन, या हाल के सामाजिक-राजनीतिक आंदोलनों) में इन सिद्धांतों के वास्तविक अनुप्रयोग का अनुभवजन्य अध्ययन अपेक्षाकृत कम है।

2. जाति, लिंग और क्षेत्रीय विविधताओं के साथ धर्मनिरपेक्षता के अंतर्संबंध पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया है। आंबेडकरवादी सामाजिक न्याय की दृष्टि को धर्मनिरपेक्षता के मुख्यधारा चर्चा में पूर्ण रूप से एकीकृत नहीं किया गया है।
3. विभिन्न विद्वानों के दृष्टिकोणों (नेहरूवादी, गांधीवादी, भार्गव का प्रिंसिपल्ड डिस्टेंस तथा आलोचनात्मक दृष्टिकोण) के बीच संवाद और उनके व्यावहारिक सामंजस्य का व्यवस्थित विश्लेषण अभी भी अधूरा है।

इन अंतरालों को ध्यान में रखते हुए आगे का शोध इन सैद्धांतिक ढाँचों को समकालीन भारतीय संदर्भ में अनुभवजन्य रूप से परखने तथा विभिन्न दृष्टिकोणों के बीच संवाद स्थापित करने की दिशा में होना चाहिए।

सैद्धांतिक आधार

आधुनिक भारत में धर्मनिरपेक्षता का राजनीतिक विश्लेषण करने के लिए एक स्पष्ट सैद्धांतिक आधार आवश्यक है। धर्मनिरपेक्षता कोई एकसमान अवधारणा नहीं है; यह विभिन्न ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक संदर्भों में भिन्न-भिन्न रूप धारण करती है। इसलिए इस अध्ययन में धर्मनिरपेक्षता के प्रमुख मॉडलों तथा भारतीय संदर्भ में विकसित विमर्शों को आधार बनाया गया है। ये सैद्धांतिक ढाँचे संवैधानिक आदर्श, राजनीतिक अभ्यास और समकालीन चुनौतियों के बीच के संबंधों को समझने में सहायक होंगे।

1. धर्मनिरपेक्षता के प्रमुख मॉडल

धर्मनिरपेक्षता के अध्ययन में मुख्यतः तीन प्रमुख मॉडल उभरकर सामने आते हैं—पृथक्करणवादी मॉडल, समदूरी मॉडल तथा सकारात्मक हस्तक्षेप मॉडल। ये मॉडल राज्य और धर्म के संबंधों की प्रकृति को अलग-अलग तरीके से परिभाषित करते हैं -

(क) पृथक्करणवादी मॉडल (Separationist Model) - यह मॉडल मुख्य रूप से अमेरिकी परंपरा से जुड़ा है, जिसमें राज्य और धर्म के बीच 'दीवार जैसी अलगाव' (wall of separation) की अवधारणा निहित है। इसमें राज्य किसी भी धर्म का समर्थन या विरोध नहीं करता और धार्मिक मामलों में पूर्ण तटस्थता बनाए रखता है। राज्य का कार्यक्षेत्र धर्म से पूरी तरह अलग माना जाता है। इस मॉडल में धर्मनिरपेक्षता का अर्थ है—राज्य का धर्म-निरपेक्ष होना तथा धर्म का निजी क्षेत्र तक सीमित रहना। भारत में नेहरूवादी दृष्टिकोण कुछ हद तक इस मॉडल से प्रभावित था, जिसमें वैज्ञानिक स्वभाव और राज्य के धार्मिक मामलों से अलगाव पर बल दिया गया। परंतु भारतीय सामाजिक यथार्थ में पूर्ण पृथक्करण व्यावहारिक रूप से कठिन सिद्ध हुआ।

(ख) समदूरी मॉडल (Equal Distance / Principled Distance Model) - यह मॉडल भारतीय विद्वान राजेव भार्गव द्वारा विकसित किया गया है। भार्गव के अनुसार, भारतीय धर्मनिरपेक्षता पश्चिमी पृथक्करणवादी मॉडल से भिन्न है। राज्य धर्मों से सख्त अलगाव नहीं रखता, बल्कि 'सिद्धांतपूर्ण दूरी' (Principled Distance) बनाए रखता है। इसका अर्थ है कि राज्य सभी धर्मों से समान दूरी बनाए रखे, परंतु समानता, स्वतंत्रता और सामाजिक न्याय की आवश्यकता होने पर हस्तक्षेप भी कर सकता है। उदाहरण के लिए, अस्पृश्यता का निषेध या व्यक्तिगत कानूनों में सुधार। इस मॉडल में राज्य धर्मों का

सम्मान करता है, परंतु किसी धर्म विशेष को विशेषाधिकार नहीं देता। भार्गव इसे 'संदर्भात्मक धर्मनिरपेक्षता' कहते हैं, जो भारतीय संविधान और सामाजिक यथार्थ दोनों के अनुकूल है।

(ग) सकारात्मक हस्तक्षेप मॉडल (Positive Intervention Model) - इस मॉडल में राज्य केवल तटस्थ नहीं रहता, बल्कि सामाजिक सुधार और समानता की दृष्टि से धर्म के आंतरिक मामलों में सक्रिय हस्तक्षेप करता है। डॉ. भीमराव आंबेडकर का दृष्टिकोण इस श्रेणी में आता है। उन्होंने जाति-व्यवस्था और धार्मिक भेदभाव के विरुद्ध राज्य की सक्रिय भूमिका का समर्थन किया। हिंदू कोड बिल जैसे सुधारवादी कानून इसी सोच का परिणाम थे। इस मॉडल में धर्मनिरपेक्षता का उद्देश्य केवल धार्मिक स्वतंत्रता सुनिश्चित करना नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय और समान नागरिकता को मजबूत करना भी है।

ये तीन मॉडल एक-दूसरे से पूर्णतः अलग नहीं हैं। भारतीय संदर्भ में ये अक्सर मिश्रित रूप में दिखाई देते हैं। राज्य एक ओर धर्मों से दूरी बनाए रखने का प्रयास करता है, दूसरी ओर सामाजिक सुधार के लिए हस्तक्षेप भी करता है।

2. भारतीय संदर्भ में 'समान सम्मान' (Equal Respect) बनाम 'समान दूरी' (Equal Distance) का विमर्श

भारतीय धर्मनिरपेक्षता की विशिष्टता को समझने के लिए 'समान सम्मान' और 'समान दूरी' के बीच का विमर्श अत्यंत महत्वपूर्ण है।

'समान दूरी' की अवधारणा मुख्य रूप से पश्चिमी पृथक्करणवादी मॉडल से जुड़ी है। इसमें राज्य सभी धर्मों से समान दूरी बनाए रखता है और किसी भी धर्म के प्रति विशेष आदर या समर्थन नहीं दर्शाता। इसका उद्देश्य राज्य की पूर्ण तटस्थता सुनिश्चित करना है।

इसके विपरीत, 'समान सम्मान' की अवधारणा भारतीय परंपरा और गांधीवादी चिंतन से अधिक निकट है। महात्मा गांधी का 'सर्व धर्म समभाव' इसी भाव को व्यक्त करता है, जिसमें सभी धर्मों के प्रति समान आदर की भावना निहित है। राजेव भार्गव ने भी इस दिशा में तर्क दिया है कि भारतीय राज्य धर्मों का केवल तटस्थ अवलोकन नहीं करता, बल्कि उन्हें सम्मान देता है, बशर्ते कि यह सम्मान संवैधानिक मूल्यों—समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व—के अनुकूल हो। इस विमर्श में दो प्रमुख दृष्टिकोण उभरते हैं—

- प्रथम दृष्टिकोण यह मानता है कि राज्य को धर्मों से समान दूरी बनाए रखनी चाहिए, अन्यथा वह बहुसंख्यकवाद या अल्पसंख्यक तुष्टिकरण के आरोपों का शिकार हो सकता है।
- द्वितीय दृष्टिकोण यह तर्क देता है कि भारतीय समाज में धर्म सामाजिक जीवन का अभिन्न अंग है, अतः राज्य का पूर्ण अलगाव व्यावहारिक नहीं है। राज्य को सभी धर्मों के प्रति समान सम्मान रखते हुए सामाजिक न्याय के लिए आवश्यक हस्तक्षेप करना चाहिए।

यह विमर्श भारतीय धर्मनिरपेक्षता की मूल द्वंद्वात्मकता को स्पष्ट करता है। एक ओर संवैधानिक आदर्श समान नागरिकता और धार्मिक स्वतंत्रता पर आधारित हैं, दूसरी ओर राजनीतिक अभ्यास में राज्य अक्सर धर्मों के साथ सक्रिय संबंध बनाए रखता है। समकालीन चुनौतियाँ—सांप्रदायिक धुवीकरण, व्यक्तिगत कानूनों का प्रश्न, अल्पसंख्यक अधिकारों की सुरक्षा तथा बहुसंख्यक पहचान की राजनीति—इसी द्वंद्व से उत्पन्न होती हैं।

इस सैद्धांतिक आधार के माध्यम से प्रस्तुत अध्ययन संवैधानिक आदर्शों, राजनीतिक अभ्यास और समकालीन चुनौतियों के बीच के संबंधों का विश्लेषण करेगा। यह विश्लेषण केवल सैद्धांतिक तुलना तक सीमित नहीं रहेगा, बल्कि यह भी देखेगा कि व्यवहार में कौन-सा मॉडल अधिक प्रभावी सिद्ध हो रहा है और किन बिंदुओं पर भारतीय धर्मनिरपेक्षता को पुनरावलोकन की आवश्यकता है।

शोध पद्धति

प्रस्तुत अध्ययन “आधुनिक भारत में धर्मनिरपेक्षता का राजनीतिक विश्लेषणात्मक अध्ययन: संवैधानिक आदर्श, राजनीतिक अभ्यास एवं समकालीन चुनौतियाँ” विषय पर आधारित है। प्रस्तुत अध्ययन की प्रकृति गुणात्मक एवं विश्लेषणात्मक है। धर्मनिरपेक्षता जैसी जटिल एवं बहुआयामी अवधारणा का अध्ययन केवल संख्यात्मक आँकड़ों से संभव नहीं है। इसलिए यहाँ मुख्य रूप से गुणात्मक पद्धति अपनाई गई है, जिसमें संविधान, राजनीतिक व्यवहार, वैचारिक विमर्श तथा समकालीन घटनाओं का गहन विश्लेषण किया गया है -

1. गुणात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धति - इस शोध में गुणात्मक पद्धति का प्रयोग इसलिए किया गया है क्योंकि धर्मनिरपेक्षता केवल संवैधानिक प्रावधानों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह राजनीतिक अभ्यास, सामाजिक यथार्थ और वैचारिक संघर्षों से भी जुड़ी हुई है। विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण के माध्यम से संवैधानिक आदर्शों और वास्तविक राजनीतिक व्यवहार के बीच के अंतर को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। अध्ययन में वर्णनात्मक विश्लेषण के साथ-साथ आलोचनात्मक विश्लेषण भी शामिल है। इसके अंतर्गत विभिन्न सैद्धांतिक मॉडलों (पृथक्करणवादी, समदूरी तथा सकारात्मक हस्तक्षेप) की सहायता से राजनीतिक घटनाओं और नीतियों की व्याख्या की गई है। इस पद्धति से यह समझने में सहायता मिलती है कि संवैधानिक आदर्श व्यवहार में किस प्रकार रूपांतरित होते हैं तथा किन कारणों से चुनौतियों का सामना करते हैं।

2. शोध स्रोत - अध्ययन के लिए प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के स्रोतों का उपयोग किया गया है। प्रमुख स्रोत निम्नलिखित हैं—

- **संविधान एवं संवैधानिक दस्तावेज:** भारतीय संविधान की प्रस्तावना, मौलिक अधिकार (अनुच्छेद 14, 15, 25-28), राज्य के नीति-निर्देशक तत्व तथा संविधान सभा के वाद-विवाद।
- **संसदीय बहस:** लोकसभा एवं राज्यसभा में धर्म, धर्मनिरपेक्षता, व्यक्तिगत कानूनों तथा सांप्रदायिक मुद्दों से संबंधित महत्वपूर्ण बहसें।
- **चुनाव आयोग के आँकड़े:** विभिन्न आम चुनावों के परिणाम, दलों के वोट प्रतिशत तथा धार्मिक आधार पर मतदान व्यवहार से संबंधित उपलब्ध आँकड़े।
- **जनगणना आँकड़े:** धार्मिक जनसंख्या की संरचना, प्रवृत्तियाँ तथा क्षेत्रीय वितरण (जनगणना 2001, 2011 तथा उपलब्ध अनुमान)।
- **राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (NCRB):** सांप्रदायिक हिंसा, दंगों तथा धार्मिक आधार पर होने वाले अपराधों से संबंधित आँकड़े।

- **प्रमुख राजनीतिक दलों के घोषणा-पत्र:** भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, भारतीय जनता पार्टी तथा अन्य प्रमुख दलों के घोषणा-पत्रों में धर्मनिरपेक्षता, अल्पसंख्यक अधिकारों तथा सांस्कृतिक राष्ट्रवाद से संबंधित प्रावधान।
- **न्यायालय के निर्णय:** उच्चतम न्यायालय एवं उच्च न्यायालयों के महत्वपूर्ण निर्णय, जैसे शाह बानो मामला, सरला मुद्गल मामला, अयोध्या विवाद से संबंधित निर्णय तथा हाल के संवैधानिक मामलों के निर्णय।

इन स्रोतों के अतिरिक्त विद्वानों के शोध-ग्रंथ, शोध-पत्र, समाचार-पत्रों के संपादकीय तथा विश्वसनीय रिपोर्टों का भी उपयोग किया गया है।

3. तुलनात्मक एवं ऐतिहासिक विश्लेषण - अध्ययन में तुलनात्मक एवं ऐतिहासिक विश्लेषण की पद्धति अपनाई गई है -

ऐतिहासिक विश्लेषण के अंतर्गत स्वतंत्रता आंदोलन से लेकर संविधान निर्माण तथा स्वतंत्र भारत के विभिन्न चरणों में धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा के विकास का अध्ययन किया गया है। गांधी, नेहरू, आंबेडकर तथा अन्य नेताओं के विचारों के साथ-साथ संविधान सभा की बहसों का विश्लेषण कर यह समझने का प्रयास किया गया है कि संवैधानिक आदर्श किस ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में निर्मित हुए।

तुलनात्मक विश्लेषण के माध्यम से संवैधानिक प्रावधानों और वास्तविक राजनीतिक अभ्यास के बीच तुलना की गई है। विभिन्न राजनीतिक दलों की नीतियों, चुनावी रणनीतियों तथा शासन-काल में लिए गए निर्णयों की तुलना कर यह देखा गया है कि धर्मनिरपेक्षता का आदर्श व्यवहार में किस प्रकार क्रियान्वित होता है। साथ ही, पश्चिमी धर्मनिरपेक्ष मॉडलों और भारतीय अनुभव के बीच तुलनात्मक दृष्टि भी अपनाई गई है, ताकि भारतीय धर्मनिरपेक्षता की विशिष्टता स्पष्ट हो सके।

इस प्रकार, गुणात्मक-विश्लेषणात्मक पद्धति, विश्वसनीय स्रोतों का उपयोग तथा तुलनात्मक-ऐतिहासिक विश्लेषण के संयोजन से अध्ययन को वस्तुनिष्ठ, सुसंगत एवं वैज्ञानिक आधार प्रदान करने का प्रयास किया गया है। यह पद्धति संवैधानिक आदर्श, राजनीतिक अभ्यास और समकालीन चुनौतियों के बीच के संबंधों को समझने में सहायक सिद्ध होगी।

अध्याय योजना

विश्लेषण

1. धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा एवं भारतीय संवैधानिक ढाँचा

भारतीय संविधान में धर्मनिरपेक्षता को स्पष्ट रूप से परिभाषित नहीं किया गया, फिर भी इसकी आत्मा पूरे संविधान में व्याप्त है। संविधान सभा की बहसों में नेहरू, आंबेडकर तथा अन्य सदस्यों ने राज्य को धर्म-निरपेक्ष रखने पर सहमति जताई, परंतु 'सेक्युलर' शब्द को प्रस्तावना में शामिल करने का विरोध इस आधार पर किया गया कि संपूर्ण संविधान ही धर्मनिरपेक्ष राज्य की अवधारणा को समाहित करता है। अनुच्छेद 14, 15, 25-28 धार्मिक स्वतंत्रता एवं समान नागरिकता सुनिश्चित करते हैं। 42वें संशोधन (1976) द्वारा प्रस्तावना में 'धर्मनिरपेक्ष' शब्द जोड़कर इसे औपचारिक मान्यता दी गई। यह संशोधन आपातकाल की पृष्ठभूमि में हुआ, जिससे

इसकी वैधता पर बाद में प्रश्न उठे। संवैधानिक ढाँचा पृथक्करणवादी नहीं, बल्कि 'प्रिंसिपल्ड डिस्टेंस' के निकट है, जहाँ राज्य धर्मों से दूरी रखते हुए सामाजिक न्याय के लिए हस्तक्षेप कर सकता है।

2. स्वतंत्रता के बाद धर्मनिरपेक्षता का राजनीतिक विकास

नेहरू युग में धर्मनिरपेक्षता वैज्ञानिक स्वभाव एवं सांप्रदायिकता-विरोधी संघर्ष से जुड़ी रही। हिंदू कोड बिल जैसे सुधार राज्य के सकारात्मक हस्तक्षेप के उदाहरण बने। आपातकाल (1975-77) ने धर्मनिरपेक्षता को राजनीतिक उपकरण बना दिया, जिससे इसकी विश्वसनीयता क्षतिग्रस्त हुई। 1980-90 के दशक में शाह बानो मामला, अयोध्या आंदोलन तथा सांप्रदायिक दंगों ने धर्मनिरपेक्षता को गंभीर चुनौती दी। मंडल-कमंडल प्रभाव ने जाति एवं धर्म दोनों को चुनावी राजनीति का केंद्र बना दिया। इस दौर में धर्मनिरपेक्षता सैद्धांतिक आदर्श से हटकर राजनीतिक रणनीति का विषय बन गई, जिसमें अल्पसंख्यक तुष्टिकरण एवं बहुसंख्यक mobilization दोनों प्रवृत्तियाँ सक्रिय रहीं।

3. चुनावी राजनीति एवं धर्मनिरपेक्षता

भारतीय पार्टी सिस्टम में धर्मनिरपेक्षता प्रमुख वैचारिक विभाजक रेखा रही है। कांग्रेस ने लंबे समय तक धर्मनिरपेक्षता को अपनी पहचान बनाया, जबकि भाजपा ने सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को आगे बढ़ाया। वोट बैंक की राजनीति ने धर्मनिरपेक्षता को व्यावहारिक रूप से कमजोर किया। चुनाव आयोग के आँकड़े एवं विभिन्न सर्वेक्षण दर्शाते हैं कि धार्मिक पहचान मतदान व्यवहार को प्रभावित करती है। उच्चतम न्यायालय के निर्णय (जैसे हिंदुत्व संबंधी मामले) ने भी चुनावी विमर्श को दिशा दी। परिणामस्वरूप, धर्मनिरपेक्षता चुनावी प्रतिस्पर्धा में अक्सर नारेबाजी तक सीमित रह गई, जबकि वास्तविक नीति-निर्माण में सांप्रदायिक समीकरण प्रभावी बने।

4. समकालीन चुनौतियाँ एवं विवाद

राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो के आँकड़े सांप्रदायिक हिंसा की निरंतरता को दर्शाते हैं, यद्यपि तीव्रता में उतार-चढ़ाव देखा जाता है। नीतिगत विवाद—समान नागरिक संहिता, अल्पसंख्यक संस्थानों की स्वायत्तता तथा धार्मिक रूपांतरण—राज्य की भूमिका को विवादास्पद बनाते हैं। अल्पसंख्यक-बहुसंख्यक संबंधों में बढ़ती धुवीकरण की प्रवृत्ति ने 'समान सम्मान' के आदर्श को कमजोर किया है। राज्य कभी-कभी सक्रिय हस्तक्षेप करता है, तो कभी तटस्थता का दावा करता है, जिससे उसकी विश्वसनीयता प्रभावित होती है। समकालीन चुनौती यह है कि धर्मनिरपेक्षता को केवल संवैधानिक घोषणा से आगे बढ़ाकर सामाजिक विश्वास एवं समान नागरिकता का वास्तविक आधार कैसे बनाया जाए।

निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध भारतीय धर्मनिरपेक्षता के संवैधानिक, ऐतिहासिक, राजनीतिक एवं समकालीन आयामों का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करता है। शोध उद्देश्यों, प्राक्कल्पनाओं तथा शोध प्रश्नों के आलोक में निम्नलिखित निष्कर्ष निकलते हैं:

1. संवैधानिक प्रावधानों एवं ऐतिहासिक विकास का अध्ययन

भारतीय संविधान में धर्मनिरपेक्षता के प्रावधान (प्रस्तावना में 'सेक्युलर' शब्द, अनुच्छेद 15, 16, 25-28) स्पष्ट रूप से राज्य को सभी धर्मों के प्रति समान व्यवहार तथा धार्मिक स्वतंत्रता की गारंटी देते हैं। ऐतिहासिक विकास की दृष्टि से यह देखा गया कि स्वतंत्रता पूर्व से ही नेहरूवादी समदूरी, गांधीवादी सर्वधर्म समभाव तथा

आंबेडकरवादी सामाजिक न्याय की दृष्टियाँ विकसित हुई। किंतु स्वतंत्रता के बाद इन प्रावधानों का क्रियान्वयन राजनीतिक दबावों के अधीन रहा। इससे स्पष्ट होता है कि संवैधानिक आदर्श मजबूत हैं, परंतु उनका व्यावहारिक अनुपालन असंगत रहा है।

2. राजनीतिक दलों एवं सरकारों की नीतियों का विश्लेषण

स्वतंत्रता के बाद प्रमुख राजनीतिक दलों एवं सरकारों की नीतियों का अध्ययन दर्शाता है कि धर्मनिरपेक्षता का आदर्श अक्सर चुनावी लाभ के लिए लचीला बनाया गया। अल्पसंख्यक तुष्टिकरण, बहुसंख्यक भावनाओं का दोहन तथा धार्मिक संस्थानों में चुनिंदा हस्तक्षेप जैसी नीतियाँ समय-समय पर अपनाई गईं। इससे प्राक्कल्पना-1 की पुष्टि होती है कि भारतीय धर्मनिरपेक्षता का संवैधानिक आदर्श राजनीतिक अभ्यास में पूर्णतः लागू नहीं हो पाया है।

3. चुनावी राजनीति, सांप्रदायिक दंगों एवं नीतिगत निर्णयों में धर्मनिरपेक्षता का प्रभाव

चुनावी राजनीति में धार्मिक पहचान का लगातार उपयोग, सांप्रदायिक दंगों के दौरान एवं बाद में राज्य की प्रतिक्रिया तथा विभिन्न नीतिगत निर्णयों का विश्लेषण स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि चुनावी प्रतिस्पर्धा ने धर्मनिरपेक्षता को कमजोर किया है। धार्मिक धुवीकरण को बढ़ावा मिलने से सामाजिक सद्भाव प्रभावित हुआ। इससे प्राक्कल्पना-2 की पुष्टि होती है कि चुनावी प्रतिस्पर्धा ने धर्मनिरपेक्षता को कमजोर किया है तथा धार्मिक धुवीकरण को बढ़ावा दिया है।

4. समकालीन चुनौतियों का आलोचनात्मक अध्ययन

सांप्रदायिकता, धार्मिक पहचान आधारित राजनीति तथा राज्य-समाज के बीच बढ़ते अंतराल जैसी चुनौतियाँ आज भी विद्यमान हैं। राज्य की धर्मनिरपेक्ष घोषणाओं और वास्तविक सामाजिक-राजनीतिक व्यवहार के बीच स्पष्ट विसंगति दिखाई देती है। इससे प्राक्कल्पना-3 की पुष्टि होती है कि राज्य की धर्मनिरपेक्ष नीतियाँ और सामाजिक-राजनीतिक वास्तविकता में स्पष्ट अंतराल विद्यमान है।

5. शोध प्रश्नों के उत्तर एवं सैद्धांतिक विश्लेषण

भारतीय धर्मनिरपेक्षता के विभिन्न सैद्धांतिक दृष्टिकोण (नेहरूवादी, गांधीवादी, आंबेडकरवादी तथा प्रिंसिपल्ड डिस्टेंस) समकालीन राजनीतिक और सामाजिक व्यवहार में किस प्रकार परस्पर क्रिया करते हैं? नेहरूवादी समदूरी और गांधीवादी सर्वधर्म समभाव आज भी आदर्श रूप में स्वीकृत हैं, किंतु व्यावहारिक राजनीति में ये अक्सर कमजोर पड़ जाते हैं। आंबेडकरवादी दृष्टि जाति और अल्पसंख्यक अधिकारों को जोड़कर धर्मनिरपेक्षता को सामाजिक न्याय से जोड़ती है, जिससे यह अवधारणा अधिक समावेशी बनती है। प्रिंसिपल्ड डिस्टेंस मॉडल राज्य-धर्म संबंधों को समझने का उपयोगी ढाँचा प्रदान करता है। ये सभी दृष्टिकोण एक-दूसरे के साथ तनावपूर्ण किंतु पूरक संबंध रखते हैं।

क्या राजेव भार्गव का 'प्रिंसिपल्ड डिस्टेंस' मॉडल वर्तमान भारत में राज्य-धर्म संबंधों को पर्याप्त रूप से स्पष्ट कर पाता है, अथवा नंदी-चटर्जी की आलोचनाएँ अधिक प्रासंगिक सिद्ध होती हैं? राजीव भार्गव का 'प्रिंसिपल्ड डिस्टेंस' मॉडल सैद्धांतिक रूप से सुसंगत है, परंतु वर्तमान भारत की कई नीतियाँ (धार्मिक संस्थानों में हस्तक्षेप, चुनिंदा कल्याण योजनाएँ आदि) नंदी-चटर्जी की आलोचनाओं को अधिक प्रासंगिक बनाती हैं। राज्य कभी-कभी धर्म से दूरी

बनाए रखने के बजाय उसे नियंत्रित या चुनिंदा समर्थन देता दिखाई देता है। अतः दोनों दृष्टियाँ एक-दूसरे की पूरक हैं।

जाति और अल्पसंख्यक अधिकारों के संदर्भ में आंबेडकरवादी सामाजिक न्याय की दृष्टि भारतीय धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा को कैसे समृद्ध या चुनौती देती है? आंबेडकरवादी दृष्टि धर्मनिरपेक्षता को केवल राज्य-धर्म संबंधों तक सीमित न रखकर सामाजिक असमानताओं (जाति एवं अल्पसंख्यक अधिकार) से जोड़ती है। इससे यह अवधारणा समृद्ध होती है, क्योंकि यह औपचारिक समानता से आगे बढ़कर वास्तविक सामाजिक न्याय की माँग करती है। साथ ही यह उन नीतियों को चुनौती देती है जो केवल धार्मिक पहचान पर आधारित हैं और सामाजिक न्याय की उपेक्षा करती हैं।

समग्र निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध से स्पष्ट होता है कि भारतीय धर्मनिरपेक्षता एक मजबूत संवैधानिक आदर्श है, परंतु राजनीतिक अभ्यास, चुनावी दबाव तथा सामाजिक-धार्मिक ध्रुवीकरण के कारण इसका पूर्ण क्रियान्वयन नहीं हो पाया। तीनों प्राक्कल्पनाएँ शोध निष्कर्षों द्वारा समर्थित होती हैं। सैद्धांतिक स्तर पर नेहरूवादी, गांधीवादी, आंबेडकरवादी तथा प्रिंसिपल्ड डिस्टेंस दृष्टियाँ महत्वपूर्ण हैं, किंतु व्यावहारिक राजनीति में इनके बीच तनाव बना रहता है। भविष्य में धर्मनिरपेक्षता को मजबूत करने के लिए संवैधानिक प्रावधानों के साथ-साथ राजनीतिक इच्छाशक्ति, सामाजिक न्याय की प्राथमिकता तथा नागरिक समाज की सक्रिय भूमिका आवश्यक है।

संदर्भ सूची

1. भारत का संविधान। (1950), भारत सरकार।
2. भार्गव, आर. (संपादक), (1998), *सेक्युलरिज्म एंड इट्स क्रिटिक्स*, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
3. भार्गव, आर. (2010), *द प्रॉमिस ऑफ इंडियाज सेक्युलर डेमोक्रेसी*, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
4. भार्गव, आर. (2023), *रीइमैजिनिंग इंडियन सेक्युलरिज्म*, परमानेंट ब्लैक, ओरिएंट ब्लैकस्वान।
5. मदान, टी. एन. (1997), *मॉडर्न मिथ्स, लॉकड माइंड्स: सेक्युलरिज्म एंड फंडामेंटलिज्म इन इंडिया*, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
6. नंदी, ए. (1989), एन एंटी-सेक्युलरिस्ट मैनिफेस्टो, जे. हिक एवं एल. सी. हेम्पेल (संपादक), *गांधीज सिग्निफिकेंस फॉर टुडे* में, पालग्रेव मैकमिलन, पृष्ठ 244।
7. स्मिथ, डी. ई. (1963), *इंडिया एज़ ए सेक्युलर स्टेट*, प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस।
8. आंबेडकर, बी. आर. (2014), *जाति का विनाश* (एनोटेटेड आलोचनात्मक संस्करण), नवायाना, (मूल प्रकाशन 1936)
9. आंबेडकर, बी. आर. (1957), *बुद्ध और उनका धम्म*, सिद्धार्थ कॉलेज पब्लिकेशन्स।
10. नेहरू, जे. (1946), *भारत की खोज*, द सिग्नेट प्रेस।
11. गांधी, एम. के. (1927), *सत्य के प्रयोग अथवा आत्मकथा*, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस।
12. भार्गव, आर. (2007), *द डिस्टिंक्टिवनेस ऑफ इंडियन सेक्युलरिज्म*, टी. एन. श्रीनिवासन (संपादक), *द फ्यूचर ऑफ सेक्युलरिज्म*, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, पृष्ठ - 20।

13. भार्गव, आर. (2019), रीडमैजिनिंग सेक्युलरिज्म: रिस्पेक्ट, डॉमिनेशन, एंड प्रिंसिपल्ड डिस्टेंस, एन. भुटा (संपादक), *फ्रीडम ऑफ रिलिजन, सेक्युलरिज्म, एंड ह्यूमन राइट्स*, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, पृष्ठ - 21।
14. चटर्जी, पी. (1994), सेक्युलरिज्म एंड टॉलरेंस, *इकनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली*, 29(28), पृष्ठ -1768।
15. मदान, टी. एन. (1987), सेक्युलरिज्म इन इट्स प्लेस, *द जर्नल ऑफ एशियन स्टडीज*, 46(4), पृष्ठ - 747।
16. नंदी, ए. (1985), एन एंटी-सेक्युलरिस्ट मैनिफेस्टो, *सेमिनार*, 314, पृष्ठ -14।
17. एस. आर. बोम्मई बनाम भारत संघ, (1994) 3 एससीसी 1।
18. केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य, (1973) 4 एससीसी 225।
19. सेन, ए. (2005)। *द आर्गुमेंटेटिव इंडियन: राइटिंग्स ऑन इंडियन हिस्ट्री, कल्चर एंड आइडेंटिटी*। एलन लेन।



EARN YOUR MBA

WWW.IIMPS.IN



Accreditation & Ranking



UGC / NCTE Approved.

INFO@IIMPS.IN

☎ 011-41005174

RESEARCH
GATEWAY

STOP PLAGIARISM



Arogyam Ayurveda
Holistic Healing through herbs



AROGYAM
ONLINE

PARIVARTAN PSYCHOLOGY CENTER

परिवर्तन

COLOR PSYCHOLOGY : HOW COLOR AFFECT YOUR CHILD



BLUE

Calms your Child's
Mind & Body

YELLOW

Promotes Concentration,
Stimulates the Memory

PINK

Evokes Empathy,
makes your Child Calm

RED

Excites and energizes
your Child's body

GREEN

Improves Reading speed
and Comprehension

www.parivartan4u.com



परिवर्तन

Confuse about your children's future?

भारतीय भाषा, शिक्षा, साहित्य एवं शोध

ISSN 2321 – 9726

WWW.BHARTIYASHODH.COM



**INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF
MANAGEMENT SCIENCE & TECHNOLOGY**

ISSN – 2250 – 1959 (O) 2348 – 9367 (P)

WWW.IRJMST.COM



**INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF
COMMERCE, ARTS AND SCIENCE**

ISSN 2319 – 9202

WWW.CASIRJ.COM



**INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF
MANAGEMENT SOCIOLOGY & HUMANITIES**

ISSN 2277 – 9809 (O) 2348 - 9359 (P)

WWW.IRJMSH.COM



**INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF SCIENCE
ENGINEERING AND TECHNOLOGY**

ISSN 2454-3195 (online)

WWW.RJSET.COM



**INTEGRATED RESEARCH JOURNAL OF
MANAGEMENT, SCIENCE AND INNOVATION**

ISSN 2582-5445

WWW.IRJMSI.COM



**JOURNAL OF LEGAL STUDIES, POLITICS
AND ECONOMICS RESEARCH**

WWW.JLPER.COM

JLPE